वेदाभिमान

ॐ

-: प्रकाशक :-

धर्म संस्थान, खरखौदा, मेरठ, उ०प्र०।

वेदाभिर्भाव

—: लेखक :—

श्री स्वामी आत्मानन्द तीर्थ

धर्म संस्थान खरखौदा, मेरठ, उ० प्र०।

—: प्रकाशक :—

धर्म संस्थान, खरखौदा, मेरठ, उ० प्र०।

सम्वत् २०५७ विक्रमी.

मूल्य : रू० ६.२५

श्रद्धेय सुमन



श्री धनेशचन्द अग्रवाल द्वारा अपने दिवंगत माता पिता

श्री हृषिकेश अग्रवाल तथा श्रीमती मूर्तिदेवी

की स्मृति में

दिये सहयोग से प्रकाशित।

वेदाभिर्भाव

प्रस्तावना

वेद पुरातन एवम् मान्य ग्रन्थ हैं। वेद ही अभ्युदय तथा निस्श्रेयस के एकमात्र प्रतिपादक हैं। अतः उपादेयता के महत्व को दृष्टिगत रखते हुए वेदाभिर्भाव को जानना अत्यावश्यक है। उपादेयता को दृष्टिगत रखते हुये यह लेख लिखा है।

स्वामी आत्मानन्द तीर्थ
चैत्र कृष्णा दशमी चन्द्रवार
२०५७ वि०।
६ चैत्र प्रविष्ट २०५७ वि०।

ओ3म्

वेदाभिर्भाव विषय सदैव से ही महत्वपूर्ण विषय रहा है। वेदों का ज्ञान निभ्रान्त और व्यापक ज्ञान हैं। सृष्टि के आरम्भ में आविर्भूत होने के कारण वेदों का ज्ञान विश्व का प्राचीनतम ज्ञान है। सत्य–विद्या तथा पदार्थ–विद्या का मूल वेद हैं। सृष्टि काल एक हजार चतुर्युगी है, अर्थात् एक चतुर्युगी ४३२०००० **X** १००० = ४३२००००००० वर्ष हैं।

शतं तैयुतं हायनान द्वे युगे त्रीणि चत्वारि कृष्मः।

इन्द्राग्नी विश्रवे देवास्तेन मन्यन्ताम ह्णीयमानाः।।

(अथर्व वेद, ८/२/२१।।)

अर्थः– हे मनुष्य! तेरे लिये सौ, दस सहस्र वर्ष, चार, तीन, दो क्रम से करते हैं, अर्थात् चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष की सृष्टि करते हैं। वायु, अग्नि तथा समस्त दिव्य पदार्थ सूर्य तथा पृथ्वी निश्चित रुपेण तेरे अनुकूल रहें।

सम्वत् १९३३ विक्रमी में लिखी ऋग्वेददिभाष्य भूमिका के वेदोत्पत्ति प्रकरण में स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने लिखा :–

वेदानामुत्पत्तौ कियन्ति वर्षाणि व्यतीतानि ?

वेदों की उत्पत्ति को कितने वर्ष हो गये हैं ?

एको वृन्दः ष0णवति कोट्योऽष्टौ लक्षाणि द्वि पच्चां शत्सहस्राणि नवशतानि षट् सप्तति चैतावन्ति वर्षाणि व्यतीतानि।

एक अरब छियानबे करोड़ आठ लाख बावन हजार नौ सौ छिहत्तर (१९६०८५२९७६) वर्ष वेदों की उत्पत्ति में व्यतीत हुए हैं। और दो अरब तैंतीस करोड़ बत्तीस लाख सत्ताइस हज़ार चौबीस वर्ष भोगने शेष हैं। यह चौबीसवां वर्ष भोग रहा है। दोनों का योग चार अरब उन्तीस करोड़ चालीस लाख अस्सी हजार वर्ष होता है। सृष्टि की आयु चार अरब बत्तीस करोड़ वर्षों में से वेद प्रकाश काल के चार अरब उन्तीस करोड़ चालीस लाख अस्सी हजार वर्ष घटाने (४३२००००००० – ४२९४०८००००) पर दो करोड़ उनसठ लाख बीस हजार वर्ष शेष रहते हैं।

सृष्टि को दिन तथा प्रलय को रात्रि माना गया है। दिन और रात्रि में दो सन्धि काल होते हैं। दो करोड़ उनसठ लाख बीस हजार वर्ष, दो भागों में विभाजित होने पर एक भाग एक करोड़ उन्तीस लाख साठ हजार वर्ष होता है।

समग्र वेद प्रकाश काल चार अरब उन्तीस करोड़ चालीस लाख अस्सी हजार वर्ष है, परन्तु वेद का आविर्भाव मानवोत्पत्ति के पांच वर्ष बाद होना आरम्भ हुआ। अतः सृष्टि की उत्पत्ति मानवोत्पत्ति तथा वेदाभिर्भाव तीनों तथ्य पृथक् पृथक् हैं।

इस समय सम्वत् २०५८ विक्रमी में सृष्टि को उत्पन्न हुए एक अरब सत्तानवे करोड़ अड़तीस लाख तेरह सौ वर्ष हो गये हैं। यह एक सौ एक वां वर्ष भोग रहा है तथा इस एक सौ एक वें वर्ष सहित दो अरब चौंतीस करोड़ इकसठ लाख छियासी हजार नौ सौ वर्ष भोगने शेष हैं।

"आदि सृष्टि में गर्भवास से उत्पत्ति नई नहीं थी और किसी को बाल्यावस्था भी न थी किन्तु सब स्त्री और पुरुषों की युवावस्था ईश्वर ने रची थी"।

(सत्यार्थ प्रकाश, प्रथम संस्करण समुल्लास ९)।

"ऐसी अवस्था आदि सृष्टि में पांच वर्ष चलती रही फिर परमात्मा ने मनुष्यों को वेद ज्ञान दिया"।

(पूना प्रवचन ६)

अतः मानवोत्पत्ति और वेदाभिर्भाव के आरम्भ में पांच वर्ष का अन्तर होने से वेद प्रकाश काल, चार अरब उन्तीस करोड़ चालीस लाख उनासी हजार नौ सौ पिच्यानवें वर्ष होता है। इस समय २०५८ विक्रमी में वेदाभिर्भाव हुये, एक अरब छिआनबें करोड़ आठ लाख त्रेपन हजार पिच्यानबें वर्ष व्यतीत हो चुकें हैं, यह छियानवां वर्ष भोग रहा है तथा वेद प्रकाश काल के इस छियानवे वें वर्ष सहित दो अरब तेंतीस करोड़ बत्तीस लाख त्रेपन हजार एक सौ एक वर्ष भोगने शेष हैं।

बाल गंगाधर तिलक ने अपने ग्रन्थ "ओरायन" में मृगशीर्ष नक्षत्र में बसन्त सम्पात् में वेद रचना काल माना है तथा इसके लिये ऋग्वेद के दशम मण्डल के ८६ सूक्त में मन्त्र में आये "मृग" शब्द से मृगशीर्ष आधार माना है। मन्त्र में मृग शब्द है मृग शीर्ष नहीं। मृग शब्द से मृग शीर्ष कल्पना करना पूर्वाग्रह युक्त तथा भ्रामक है।

बाल गंगाधर तिलक तथा अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने वेदों को प्राचीन तथा नवीन ऋषियों की रचना माना है। अल्पज्ञ जीव इस प्रकार की सर्वज्ञतापूर्ण रचना कर ही नहीं सकता है। सौष्ठव पूर्ण संगीतमय रचना सर्वज्ञ द्वारा ही सम्भव है। सर्वज्ञ परमात्मा ने ही मानवोत्पत्ति के साथ ही अभ्युदय तथा निस्श्रेयस प्राप्ति के लिये मानव को वेदों का ज्ञान दिया। ज्ञान दो प्रकार का होता है नित्य तथा नैमित्तिक। स्वाभाविक ज्ञान जीव का नित्य ज्ञान है। किसी निमित्त से प्राप्त होने वाला ज्ञान नैमित्तिक ज्ञान है। नैमित्तिक ज्ञान ही प्राणी की उन्नति का एक मात्र साधन है।

मानवोत्पत्ति के साथ ही विकास की आवश्यकता होती है। मानवोत्पत्ति के पाँच वर्ष पश्चात् नैमित्तिक ज्ञान के रुप में वेदाभिर्भाव आरम्भ हुआ। उस समय हिमालय का त्रिविष्टप क्षेत्र ही जल से रहित था। त्रिविष्टप तीन भागों में विभक्त था। पूर्वी त्रिविष्टप, मध्य त्रिविष्टप तथा पश्चिमी त्रिविष्टप। पश्चिमी त्रिविष्टप में विशाल मैदान तथा विन्दुसर नाम का विशाल ह्रद था। अब भी पश्चिमी त्रिविष्टप का यह क्षेत्र मनसर नाम से विख्यात है। कैलाश पर्वत का समीपस्थ यह क्षेत्र बड़ा रमणीक है तथा विन्दुसर अब मानसरोवर ह्रद नाम से विख्यात है। मानसरोवर के समीप से ही सिन्धु, शतद्रु तथा ब्रह्मपुत्र का उद्गम है। इसी मनसर क्षेत्र में मानव से पूर्व अण्डज, स्वेदज, जरायुज प्राणी एवम् उद्भिज उत्पन्न

हो चुके थे। समस्त प्राणियों के पश्चात् जरायुज प्राणी मानव सहस्रों की संख्या में उत्पन्न हुए। मानवोत्पत्ति के समय दो प्रकार के मानव उत्पन्न हुए।

तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जात मग्रतः।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये।। (य० ३१)

साध्य अर्थात् साधारण मनुष्य तथा दूसरे ऋषि।

अज्येष्ठासो अकनिष्ठासः एते संभ्रातरो वावृधु सौभगाय।
युवा पिता स्वपा रूद्र एषां सुदुघा पृश्निः सुदिना मरूदम्यः।। (ऋ० ५/६०/५)

मानवोत्पत्ति के समय उत्पन्न मानव परस्पर (अज्येष्ठासः) ज्येष्ठ नहीं थे (अकनिष्ठासः) कनिष्ठ नहीं थे (एते) वे सब (संभ्रातरौ) सम्यक् रूपेणा भ्रातृ भाव से युक्त थे, (युवा पिता स्वपा) तरूण, रक्षक तथा परस्पर पालन करने में समर्थ (रूद्रः) दुष्टों को रूलाने में सक्षम थे (एषाम्) ये (पृश्निः) पृथ्वी (सुदुघा) अन्नादि से परिपूर्ण (सुदिना मरूदम्यः) वे सुदिन स्वच्छ जलवायु से युक्त थे।

आरम्भ में सभी प्राणी तरूण अवस्था में उत्पन्न हुए। यदि शिशु अवस्था में उत्पन्न होते तो उनका पालन कौन करता, यदि वृद्ध अवस्था में उत्पन्न होते तो सृष्टि रचना का प्रवाह क्रम आगे कैसे चलता।

सूर्या चन्द्रमसौधाता यथा पूर्वमकल्पयत्।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्ष मथौ स्वः।।
(ऋ० १० ।१९० ।३ ।)

परमात्मा ने पूर्व कल्प की भांति सूर्य चन्द्रादि पदार्थों को रचकर धारण किया तथा पूर्व कल्प की भांति वेदों का ज्ञान दिया।

मनुष्योत्पत्ति के पश्चात् साधारण मनुष्य सम्मान्य रुप से विचरने लगे। परन्तु ऋषि कोटि के मनुष्य पूर्व कल्प के समाधिजन्य संस्कारों के कारण समाधिस्थ हो चिन्तन में लीन हो गये।

पूर्व सृष्टि के "भव प्रत्यय विदेह प्रकृति लयाना" (यो० द० स० पा०) योगी ही वर्तमान सृष्टि में मानवोत्पत्ति के समय ऋषियों के रुप में उत्पन्न हुए तथा वेदाभिर्भाव के पश्चात् मुक्त हो गये। विशेष पुण्यों के फलस्वरुप मुक्ति में आनन्द भोगकर इकत्तीस नील दस खरब चालीस अरब वर्षों में विशेष पुण्य समूह की समाप्ति पर मुक्ति से लौटने वाला जीव अपने पाप पुण्य की तुल्यता से साधारण योग्यता युक्त हो जन्म लेता है।

वेदाभिर्भाव के समय पूर्व सृष्टि में साधना के कारण जो वर्तमान सृष्टि में सर्वोत्कृष्ट रुप में उत्पन्न हुए उनपर समाधि अवस्था में वेदाभिर्भाव हुआ।

परमात्मा ने समाधि अवस्था में चार ऋषियों के सर्वोत्कृष्ट होने के कारण वेद पढ़ाये।

"ब्रह्म व्यापक होने के कारण चारों को पृथक्–पृथक् और क्रमशः पढ़ाता गया क्योंकि वह चारो परिमित बुद्धि वाले होने

04.04.2013

हो चुके थे। समस्त प्राणियों के पश्चात् जरायुज प्राणी मानव सहस्रों की संख्या में उत्पन्न हुए। मानवोत्पत्ति के समय दो प्रकार के मानव उत्पन्न हुए।

तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जात मग्रतः।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये।। (य० ३१)

साध्य अर्थात् साधारण मनुष्य तथा दूसरे ऋषि।

अज्येष्ठासो अकनिष्ठासः एते संभ्रातरो वावृधु सौभगाय। युवा पिता स्वपा रूद्र एषां सुदुंधा पृश्निः सुदिना मरूद्भ्यः।। (ऋ० ५/६०/५)

मानवोत्पत्ति के समय उत्पन्न मानव परस्पर (अज्येष्ठासः) ज्येष्ठ नहीं थे (अकनिष्ठासः) कनिष्ठ नहीं थे (एते) वे सब (संभ्रातरौ) सम्यक् रूपेणा भ्रातृ भाव से युक्त थे, (युवा पिता स्वपा) तरूण, रक्षक तथा परस्पर पालन करने में समर्थ (रूद्रः) दुष्टों को रूलाने में सक्षम थे (एषाम्) ये (पृश्निः) पृथ्वी (सुदुधा) अन्नादि से परिपूर्ण (सुदिना मरूदम्यः) वे सुदिन स्वच्छ जलवायु से युक्त थे।

आरम्भ में सभी प्राणी तरूण अवस्था में उत्पन्न हुए। यदि शिशु अवस्था में उत्पन्न होते तो उनका पालन कौन करता, यदि वृद्ध अवस्था में उत्पन्न होते तो सृष्टि रचना का प्रवाह क्रम आगे कैसे चलता।

सूर्या चन्द्रमसौधाता यथा पूर्वमकल्पयत्।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्ष मथौ स्वः।।
(ऋ० १० ।१९० ।१।।)

परमात्मा ने पूर्व कल्प की भांति सूर्य चन्द्रादि पदार्थों को रचकर धारण किया तथा पूर्व कल्प की भांति वेदों का ज्ञान दिया।

मनुष्योत्पत्ति के पश्चात् साधारण मनुष्य सम्मान्य रुप से विचरने लगे। परन्तु ऋषि कोटि के मनुष्य पूर्व कल्प के समाधिजन्य संस्कारों के कारण समाधिस्थ हो चिन्तन में लीन हो गये।

पूर्व सृष्टि के "भव प्रत्यय विदेह प्रकृति लयानां" (यो० द० स० पा०) योगी ही वर्तमान सृष्टि में मानवोत्पत्ति के समय ऋषियों के रुप में उत्पन्न हुए तथा वेदाभिर्भाव के पश्चात् मुक्त हो गये। विशेष पुण्यों के फलस्वरुप मुक्ति में आनन्द भोगकर इकत्तीस नील दस खरब चालीस अरब वर्षों में विशेष पुण्य समूह की समाप्ति पर मुक्ति से लौटने वाला जीव अपने पाप पुण्य की तुल्यता से साधारण योग्यता युक्त हो जन्म लेता है।

वेदाभिर्भाव के समय पूर्व सृष्टि में साधना के कारण जो वर्तमान सृष्टि में सर्वोत्कृष्ट रूप में उत्पन्न हुए उनपर समाधि अवस्था में वेदाभिर्भाव हुआ।

परमात्मा ने समाधि अवस्था में चार ऋषियों के सर्वोत्कृष्ट होने के कारण वेद पढ़ाये।

"ब्रह्म व्यापक होने के कारण चारों को पृथक्–पृथक् और क्रमशः पढ़ाता गया क्योंकि वह चारो परिमित बुद्धि वाले होने

के कारण एक ही समय में कई विद्याओं (विषयों) को नहीं सीख सकते थे और प्रत्येक की बुद्धि (ज्ञान) प्राप्ति की शक्ति भिन्न होने के कारण कभी चारों एक समय में और कभी पृथक्–पृथक् समझ कर एक साथ पढ़ते रहे। जिस प्रकार चारो वेद पृथक्–पृथक हैं, उसी प्रकार प्रत्येक ऋषि को एक एक वेद पढ़ाया। शिक्षा देने में कितना समय लगा ? जितना समय उनकी बुद्धि की दृढ़ता के लिये आवश्यक था''। वही अक्षर जो वेद में लिखे हुए हैं, शब्दार्थ सम्बन्ध सहित पढ़ाये।

पश्य देवस्य काव्यं न ममारि न जीर्यति। (अथर्व० १०।८।३२।।)

सर्वज्ञ परमात्मा के वेद रूपी काव्य को देख जो न तो जीर्ण होता है, और न नष्ट होता है। वेद परमात्मा का सनातन काव्य है तथा सृष्टि परमात्मा की कृति है।

अग्निः पूर्वेभि र्ऋषिभिरीड्यो नूतनैरूत सदेवाँ एह वक्षति।।

(ऋ० १।१।२)

अग्नि, वायु, आदित्य तथा अङ्गिरा आदि प्राचीन ऋषियों तथा मन्त्र द्रष्टा वशिष्ठ, विश्वामित्र आदि द्वारा परमात्मा की स्तुति की जाती है। वह विद्वानों को यह कहते हैं।

अग्नि वायु रविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।

दुदोह यज्ञ सिद्धयर्थ ऋग्यजुः सामलक्षणम्।। मनु०।।

अग्नि, वायु, आदित्य तथा अंगिरा संज्ञक सनातन ऋषियों ने यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों की सिद्धि के लिये ब्रह्मा को चारो वेद पढ़ाये।

अग्निर्वा ऋग्वेदो जायते, वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात्सामवेदः।

(माध्यंदिनीय, शतपथ ब्राहमणा)।

अग्नि ऋषि से ऋग्वेद, वायु ऋषि से यजुर्वेद, आदित्य ऋषि से सामवेद तथा अंगिरा ऋषि से अथर्ववेद प्रकाशित हुए।

परमात्मा से आविर्भूत ज्ञान रूपी पशु के :–

चत्वारि श्रृंङग त्रयोऽस्य पादा०।

ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद शीर्ष स्थानीय चार श्रृङग है तथा उदान्त, अनुदान्त तथा स्वरित रूपी स्वर, आश्रयरूप तीन पाद हैं।

चत्वारि वाक् परिमिता पदानि०।।

परमात्मा की वेदज्ञान रूपी परिमित वाणी ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद के रूप में अस्खलित रूप से प्रवाहित हो रही है, जिसे मनीषी ब्राह्मण जानते हैं।

इस श्वेत वाराह कल्प संज्ञक सृष्टि में मनुष्य चार अरब उन्तीस करोड़ चालीस लाख अस्सी हजार वर्ष पर्यन्त रहेगा। इस समय सम्वत् दो हजार सन्तावन विक्रमी में मानव को एक अरब छियानबे करोड़ आठ लाख त्रेपन हजार निन्यानवे वर्ष व्यतीत हो चुके हैं, यह सौवां वर्ष भोग रहा है। इस सौंवे वर्ष सहित दो अरब तैतीस करोड़ बत्तीस लाख छब्बीस हजार नौ सौ एक वर्ष भोगने शेष हैं।

पूर्व कल्पों की भांति, इस कल्प में भी सम्पूर्ण वेद–प्रकाश

काल चार अरब उन्तीस करोड़ चालीस लाख उन्नासी हजार नौ सौ पिच्यानबे वर्ष है। इस समय सम्वत् २०५७ विक्रमी में वेद **प्रकाश को एक अरब छिआनवे करोड़ आठ लाख त्रेपन हजार** चौरानबे वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। यह पिच्यानवां वर्ष भोग रहा है। इस पिच्यानवे वर्ष सहित दो अरब तैंतीस करोड़ बत्तीस लाख छब्बीस हजार एक वर्ष भोगने शेष हैं। वेदाभिर्भाव के समय वेद एक ही था, यह मान्यता सर्वथा भ्रान्त मान्यता है।

तस्माछजात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दासि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत।। (ऋ० १०/९०।।)

परमात्मा से ऋग्वेद तथा सामवेद प्रकाशित हुए। उससे ही यजुर्वेद तथा अथर्ववेद प्रकाशित हुए। चारों वेद पद्यमय छन्द बद्ध तथा गान के स्वरों से युक्त हैं। गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप, बृहती, पंक्तिः, त्रिष्टुप् तथा जगती सात छन्द हैं। षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत तथा निषाद सात स्वर हैं। यह सात छन्द तथा सात स्वर, "सप्त हस्ता सः" सात हाथ हैं।

मन्त्रों के ऊपर उल्लिखित ऋषि, मन्त्र द्रष्टा हैं न कि मन्त्रों के रचयिता। मन्त्रों के ऊपर उल्लिखित ऋषि वैवस्वत मन्वन्तर के हैं। मन्त्र द्रष्टा ऋषि पुरातन नहीं।

मन्त्रों के देवता भी वैवस्वत मन्वन्तर के ही हैं। "या विषय सा देवता उच्यते" मन्त्र का विषय ही देवता है। देवता तथा विनियोग (उपयोग अथवा प्रयोजन) का परस्पर नैमित्तिक

सम्बन्ध है। अतः मन्त्रों के देवता तथा ऋषि नैमित्तिक हैं नित्य नहीं।

वेदों के ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्व वेद सहेतुक नित्य सनातन नाम हैं।

"ऋग्वेदे सर्वेशे पदार्थानां गुण प्रकाशः कृतोऽस्ति"। ऋग्वेद में सब गुणों का प्रकाश किया है। "यजुर्वेदे विदित गुणानां पदार्थानां सकाशात् क्रियया ऽनेक विद्यापकार ग्रहणाय विधानं कृतमस्ति"। यजुर्वेद में क्रिया काण्ड का विधान लिखा है, तथा अनेक विद्याओं के ठीक–ठीक विचार करने से संसार में व्यवहारी पदार्थों से उपयोग सिद्ध करना होता है।

"साममिर्गायन्ति"। सामवेदे ज्ञान क्रिया विद्ययो दीर्घ विचारेण फलावधि पर्यन्तं विद्या विचारः। सामवेद से गाया जाता है। सामवेद से ज्ञान, तथा दीर्घ विचार से फल पर्यन्त विचार किया जाता है। उपासना काण्ड की वृद्धि का फल कितना और कहाँ तक होना चाहिए। अथर्व वेदेऽपि त्रयाणां वेदानांमध्ये यो विद्या फल विचारो विहितो ऽस्ति तस्य पूर्त्ति करणेन रक्षणोन्नति विहिते स्तः। अथर्ववेद में, तीनों वेदों में जो विद्या है उन सब के शेष भाग की पूर्ति का विधान और सब विद्याओं की रक्षा है।

ऋग्वेद का उपवेद आयुर्वेद, यजुर्वेद का उपवेद धनुर्वेद, सामवेद का उपवेद गान्धर्ववेद तथा अथर्ववेद का उपवेद

अर्थवेद है। उपवेदों के विभिन्न विषय ही वेदों के महत्व का प्रतिपादन करते हैं।

वेदों की ग्यारह सौ सत्ताइस शाखा हैं। इन शाखाओं का प्रतिपादन वैवस्वत मन्वन्तर में हुआ है। ऋग्वेद की शाकल शाखा, यजुर्वेद की माध्यंदिनी शाखा, सामवेद की कौथुमी शाखा तथा अथर्ववेद की शौनक शाखा ही संहिता ग्रन्थ हैं। स्वायम्भुव मनु की चौथी पीढ़ी में वेद लिपिबद्ध हुए। ब्राह्मण ग्रन्थ, आरण्यक, कल्पग्रन्थ, उपनिषद तथा वेदांगादि सभी वैवस्वत मन्वन्तर की रचना हैं।

वेदों में अभ्युदय के लिये पदार्थ विद्या के साथ निस्श्रेयस के लिये सत्यविद्या अर्थात् अध्यात्म विद्या का विशद निरुपण है। सृष्टि विषयक विषयों के निरूपण के साथ वेदों में प्रलय का भी विवेचन है।

ना सदा सीन्नो सदासीत्त दानीं नासी द्रजो नो व्योमा परोयत्।
किमावरीवः कुहकस्य शर्मन्नम्भः किमासी द्गहनं गभीरम्।।

(ऋ० १०/१३०/१)

प्रलय के समय सत अर्थात् जगत् नहीं था। प्रलय का वर्णन इस नासदीय सूक्त में है। जीवात्मा की मुक्तावस्था का वर्णन भी वेद में है। सभी सम्प्रदाओं के ग्रन्थों में, इतिहास तथा आत्मिक उन्नति के साधनों का वर्णन है, परन्तु किसी भी सम्प्रदाय के ग्रन्थों में सांसारिक उन्नति के लिये अभ्युदयपरक साधनों का वर्णन सर्वथा नहीं है। अभ्युदय तथा निस्श्रेयस के एक मात्र

साधन वेद हैं।

"धर्म जिज्ञास मानानां प्रमाणं परमं श्रुति"। मनु०।।

धर्म (व्यवहार) विषयक परम प्रमाण वेद हैं।

वेदाऽखिलो धर्ममूलम् ।। मनु०।।

वेद ही धर्म का मूल है।

संसार की सर्वांगीण उन्नति ही वेद की उपादेयता है।

वेदों में पुररूक्ति नहीं है। एक ही विषय, एक ही सन्दर्भ तथा एक ही प्रयोजन या विनियोग के लिये एक ही मन्त्र की पुनः आवृति पुनरूक्ति है। वेदों में मन्त्र विषय (देवता) सन्दर्भ तथा प्रयोजन सहित हैं। प्रत्येक मन्त्र का देवता अर्थात् विषय, सन्दर्भ तथा प्रयोजन एवम् विनियोग पृथक्–पृथक् है। अतः वेद में पुनरूक्ति न होकर पुनरावृति है।